**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

# ऋषि ज्ञान की महत्ता

**राजेश कुमार[1]**

**असिस्टेंट प्रो० सुषमा नारा[2]**

भारतीय परम्परा के अनुसार वेद परमात्मा के निःश्वास हैं। अतीन्द्रिय वेद राशि का परमेश्वरानुग्रह से अलौकिक सामर्थ्य सम्पन्न ऋषियों ने मानस प्रत्यक्ष किया है। ऋषि वैदिक संस्कृति की विपुल विरासत से निर्माता और प्रवर्तक है। वैदिक वचनों के लिए प्राण स्वरूप ऋषियों की प्रखर मेधा व बुद्धि में स्वतः स्फूर्त होकर वेद रूप ज्ञान मन्त्र रूप में प्रकट हुआ। दिव्य ज्ञान के माध्यम से भूत ऋषि निश्चय ही अलौकिक, अतीन्द्रिय, क्रान्तद्रष्टा और सर्वज्ञ रहें तभी उन्होंने समाधि की अलौकिक एवम् अतिविशिष्ट स्थिति में चक्षुओं द्वारा मन्त्रों का प्रत्यक्ष दर्शन किया था।

## ऋषि तत्त्व की परिभाषा

ऋषि तत्त्व की दो प्रमुख परिभाषायें प्राप्य है – प्रथम–'ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः[3] अर्थात् ऋषि वे हैं, जिन्होंने समाधि की अलौकिक स्थिति में मन्त्रों का दर्शन किया। निरुक्त में यास्क मुनि ने 'ऋषि' शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए बताया कि औपमन्यव आचार्य के मत अनुसार 'ऋषि' शब्द 'दृश' धातु से निष्पन्न हुआ है क्योंकि इन ऋषियों ने मन्त्रों का दर्शन किया।[4] निरुक्त में इसी स्थान पर एक और उद्धरण मिलता है जिससे 'ऋषि' शब्द गत्यर्थक 'ऋष्' धातु से निष्पन्न है। जिसमें बताया कि तपस्या में रत इन ऋषियों के पास मन्त्र गये अर्थात् उन्हें प्राप्त हुए।

1 शोधार्थी, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
2शोध–निर्देशिका, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

3निरु० 7.3 एवम् उच्चावचैरभिप्रायै ऋषीणां मन्त्रद्रष्टयो भवन्ति।

4निरु० 2.11 ऋषिर्दर्शनात्। स्तोमान् ददर्शेत्यौपमन्यवः।

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

''तद् यदेनांस्तपस्यमानान् ब्रह्म स्वयम्भवानर्षत्, तद् ऋषीणाम् ऋषित्वम्'' इति विज्ञायते।[5]

शतपथ ब्राह्मण में 'ऋषि' शब्द को 'रिष्' धातु से निष्पन्न माना गया है – ''श्रमेण तपसा अरिषन्त, तस्माद् ऋषयः'।[6] यहाँ 'रिष्' धातु का अर्थ तप करना है। 'ऋषि' शब्द को चाहे 'दृश्' धातु से अथवा 'ऋष्' व 'रिष्' से निष्पन्न माना जायें। प्रत्येक अवस्था इस शब्द का अभिप्राय है कि ऋषि वे हैं जिन्होंने तपस्यारत होकर समाधि में मन्त्रों का दर्शन किया। समाधि में लीन मन्त्रों का दर्शन अथवा ऋषि के समक्ष मन्त्रों का उपस्थित होना अथवा प्राप्त होना सभी एक ही है जिसे दो प्रकार से बताया गया है। मन्त्र दर्शन को लौकिक स्तर पर अथवा बुद्धि को समझाने के लिए मन्त्र–प्रणयन अथवा मन्त्रों की रचना भी कह सकते हैं।

ऋषियों की इस असाधारण विशेषता को स्पष्ट करते हुए निरुक्तकार ने कहा कि ऋषियों ने मन्त्रों का साक्षात्कार किया था – समाधि की अलौकिक एवं अतिविशिष्ट स्थिति में दिव्य चक्षुओं द्वारा प्रत्यक्ष दर्शन किया था –

'साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः।'[7]

निरुक्त की इस पंक्ति की व्याख्या करते हुए स्कन्द स्वामी ने अपने भाष्य में स्वीकार किया कि 'धर्म' शब्द का प्रयोग वैदिक मन्त्रों के लिए हुआ है। इनकी व्याख्या है कि अतीन्द्रिय एवं असंवेद्य धर्म के स्वरूप को किसी न किसी विशिष्ट रूप में ही देखा जा सकता है –

''धर्मस्यातीन्द्रियत्वात् साक्षात्करणस्यासम्भवात् 'धर्म' शब्देनात्र तदर्थ मन्त्रब्राह्मणम् उच्यते। तत्साक्षात्कृतो धर्मो यैस्ते साक्षात्कृतधर्माण ऋषयः''।[8]

5निरु० 2.11; ऋग्वेद सायण भाष्य 1.1.1
6 शत०ब्रा० 6.1.1
7निरु० 1.20
8निरु० स्कन्द माहेश्वर– टीका, भा० 1, पृ० 113–14

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

निरुक्त के एक अन्य प्रमुख व्याख्याकार आचार्य दुर्ग ने यहाँ अपनी व्याख्या में 'ऋषि' शब्द को 'ऋष्' धातु से निष्पन्न बताया है। उनके मत में जिन विशिष्ट जनों ने मन्त्रों का विविध स्थानों पर विविध रूपों में प्रयोग करके उनसे उत्पन्न होने वाले फलों का साक्षात्कार किया वे ऋषि हैं। इस प्रकार दुर्गाचार्य अनुसार मन्त्रों से उत्पन्न फलों के लिए औपचारिक वृत्ति से यहाँ 'साक्षात्कृत धर्माणः' पद में, 'धर्म' शब्द का प्रयोग किया है –

'ऋषन्ति–अमुष्मात् कर्मणः एवम् अर्थवता मन्त्रेण संयुक्ताद् अमुना प्रकारेण एवं लक्षणः फल–विपरिणामो भवति इति–पश्यन्ति त ऋषयः'।[9]

## ऋषि तत्त्व की दूसरी प्रसिद्ध परिभाषा

'यस्य वाक्यं स ऋषिः' अर्थात् मन्त्ररूप वाक्यों के वक्ता ऋषि हैं। अभिप्राय है कि जिस–जिस ने अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिए देवों की स्तुति की उस–उस को उन –उन मन्त्रों का ऋषि मान लिया गया।[10]

ऋग्वेद के संवाद सूक्तों में नदी, पणि, सरमा आदि का जो ऋषित्व मिलता है, वहाँ इस दूसरी परिभाषा को और व्यापक बना कर इन स्थलों की संगति लगायी गयी है अर्थात् जो भी जिस मन्त्र का वक्ता है, वह उस वाक्य का ऋषि है। इस दृष्टि से नदी, सरमा, पणि आदि का ऋषित्व सुसंगत है। दूसरे शब्दों में 'ऋषि' शब्द का यहाँ अर्थ है 'वक्ता'।[11]

इन दोनों परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि देवों के प्रति स्तुति रूप मन्त्रों के द्रष्टा, प्रयोक्ता अथवा वक्ता ऋषि हैं। जिन मन्त्रों में देवों की स्तुति नहीं है अपितु किसी भाव, विधि अथवा निषेध या अन्य किसी प्रकार का कथन है वहाँ भी उन मन्त्रों के प्रयोक्ता (वक्ता) को ऋषि माना गया है। यहाँ पर 'द्रष्टा' तथा 'प्रयोक्ता' इन दोनों के अभिप्रायों में एक विशेष अन्तर प्रतीत होता है, जिसके आधार पर ऋषियों के दो स्तर बन जाते हैं। प्रथम स्तर पर आद्य अथवा अति प्राचीन ऋषि आते हैं, जिन्होंने मन्त्रों का साक्षात्कार किया, मन्त्रों का दर्शन किया। दूसरी श्रेणी में वे ऋषि आते हैं जिन्होंने उन दृष्ट मन्त्रों का प्रयोग किया – उनसे विभिन्न देवताओं का स्तवन किया, उन्हें जीवन में चरितार्थ किया अथवा दूसरे शब्दों में उन्हें सिद्ध

---

9निरु०–दुर्गाचार्यकृत–टीका, भा० 1, पृ० 114

10निरु० 7.1 यत्काम ऋषिर्यस्यां देवतायाम् आर्थपत्यम् इच्छन् स्तुतिम् प्रयुङ्क्ते ...।

11 बृ०दे० 2.28 संवादेष्वाह वाक्यं यः स तु तस्मिन् भवेद् ऋषिः।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

किया।[12] इन्हीं द्वितीय स्तर वाले ऋषियों के लिये निरुक्त[13] में संभवतः 'अवर' (ऋषि) शब्द का प्रयोग हुआ है।

ऋग्वेद में अनेक बार 'ऋषि' शब्द का प्रयोग देवताओं–यथा – अग्नि,[14] इन्द्र,[15] आदि के लिए भी हुआ है। वहाँ इस शब्द का अर्थ 'अतीन्द्रियार्थद्रष्टा', 'अलौकिक–दृष्टि –सम्पन्न' या 'क्रान्तद्रष्टा', 'सर्वज्ञ' इत्यादि किया गया है। मन्त्रों के रचयिता, वक्ता अथवा कर्ता आदि की दृष्टि से ऋषियों को 'स्तोता', मन्त्रकृत,[16] कवि[17] इत्यादि भी कहा गया है।

## ज्ञान की महत्ता

ज्ञान ही वह माध्यम है, जिससे हम उचित–अनुचित का आंकलन कर उचित मार्ग का अनुसरण करने का सामर्थ्य प्राप्त कर पाते हैं। ज्ञान केअभाव में मानव की समस्त प्रगति अवरूद्ध हो जाते है। इसी कारण ज्ञान की महत्ता का मूल्यांकन करते हुए वेदों में उक्त है कि जो ज्ञान मन की प्रवृत्ति के भी पूर्व आत्मा के भीतर विद्यमान है तथा हृदय के मनन करने वाले अंतकरण से नेत्रादि ब्रह्मेन्द्रियों द्वारा सम्यक् प्रकार से प्राप्त होता है, इस ज्ञान का अनुकरण करके पुण्य आचारवान सत्पुरुषों के लोक को मानव द्वारा पाया जा सकता है,जहाँ पूर्वोत्पन्न एवं चिरन्तन ऋषिगण पहुंच चुके हैं।[18]

ज्ञान व्यक्ति को उच्च स्थान प्रदान कराने वाला माध्यम है। जिससे मानव श्रेष्ठत्व को प्राप्त करता है। श्रेष्ठों के द्वारा ही निकृष्टों का उद्धार संभव है। मनुस्मृति में भी ज्ञान का महत्त्व इसी रूप में वर्णित है कि मनुष्य अपनी अधिक आयु, सफेद बालों, अधिक धन, अधिक बंधु–बान्धवों से श्रेष्ठ नहीं बनता है, अपितु जो सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी है, जिसके पास ज्ञान रूपी धन है, वही महान् है।[19]

---

12 वाचस्पत्यम् – येन यद् ऋषिणा दृष्टं सिद्धिः प्राप्ता च येन वै।
मन्त्रेण तस्य तत्प्रोक्तम् ऋषिभावः स उच्यते।।

13निरु० 1.20 तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः।

14 ऋ० 6.16.2 अग्निरिद्धि प्रचेता अग्निर्वेधस्तम ऋषिः।

15 ऋ० 5.29.1 अर्चन्ति त्वा मरुतः पूतदक्षास्त्वमेषामृषिरिन्द्रासि धीरः।

16 जै०ब्रा० 2.266 ऋषिर्ह स्म मन्त्रकृद् ब्राह्मण आजायते।

17 मै०सं० 4.1.2 ऋषयः कवयः

18 शु० यजु० 18.58 यदाकूतात्समसुस्त्रोद्धदो वा मनसो वा संभृतं चक्षुषो वा।
तदनु प्रेत सुकृतामु लोकं यत्र ऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः।।

19 मनु०– 2.154– न हायनैर्न पलितैर्न वित्तेन न बन्धुभिः।

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ऐसे श्रेष्ठ ज्ञानी जनों का सान्निध्य श्रेष्ठत्व प्राप्ति का एकमात्र उपाय माना गया है। इसी संदर्भ में कठोपनिषद् कहता है–''उतिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत''[20] अर्थात् उठो जागो और श्रेष्ठों को प्राप्त करके बोध को प्राप्त करो, अतः सर्वप्रथम श्रेष्ठ ज्ञानी जनों के पास जाकर श्रेष्ठ गुणों को प्राप्त कर उन्हें अपने अन्तःकरण में धारण करना चाहिए। तत्पश्चात् अन्यों को भी श्रेष्ठ बनाने के उद्देश्य से उन्हें विशिष्ट श्रेष्ठगुणों के लिए प्रेरित करना चाहिए। ज्ञान की प्राप्ति होने पर व्यक्ति की आयु, सामर्थ्य, इन्द्रियों की शक्तियां आदि सभी में वृद्धि हो जाती है। कहा भी गया है कि जिससे सबका हित होता है, उस ज्ञान की प्राप्ति करनी चाहिए।उसी ज्ञान से मनुष्य की आयु तथा इन्द्रियों की शक्ति आदि मृत्युपर्यन्त उत्तम अवस्था में रहती है।[21]

ज्ञानयुक्त विद्वान्वह है जिसके सम्पूर्ण कार्य, कामना और संकल्प से रहित होते हैं, ज्ञान रूपी अग्नि से दग्ध हुए कर्मों वाले उस व्यक्ति को पंडित कहते हैं।[22] स्वामी करपात्री जी के अनुसार ज्ञानाग्नि से अज्ञान रूपी हिम टूट जाता है और मन चन्द्रमा की भांति ही पुनः–पुनः नवीन होकर प्रकाशित होता है। यह भूमि कर्म करने का श्रेष्ठ क्षेत्र है।[23] ज्ञान का होना हीअज्ञान की निवृत्ति है तथा सम्पूर्ण कर्तव्यकर्म करते रहने की प्रेरणा का आधार भी ज्ञान ही है। ज्ञान की उपस्थिति ही अज्ञान को विच्छेद कर कर्म करते रहने की प्रेरिका स्वरूप है। ज्ञान रूपी खड्ग द्वारा विकारों की निवृत्ति हेतु ऋषि प्रार्थना करता है कि हे ज्ञान चक्षु! ब्रह्म ज्ञान द्वारा अश्वाभिमानी जीव के अंगों को छिद्रहीन करो और प्रत्येक अंग के विकारों का अपने मधुर उपदेश द्वारा नाश करो।[24] बृहदारण्यकोपनिषद्[25] के'' तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमयेति''– इस उद्घोष में भी सत्यज्ञान प्राप्ति की जो अप्रतिम इच्छा है उसका निहितार्थ भी परम उद्देश्य प्राप्ति ही है जिसके बाद अन्य कुछ शेष नहीं बचता है।

---

ऋषयश्चक्रिरे धर्म योऽनूचानः स नो महान्।।

20 कठोपनिषद् – 1.3.14

21 शु० यजु० – 36.24

22 भगवद्गीता – 4.19

23 शु० यजु० – 23.10 करपात्र भाष्य – चन्द्रमा जायते पुनः।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत्।।

24 शु० यजु० – 25.41 (करपात्र भाष्य)

25 बृहदारण्यकोपनिषद् –1.3.28

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय ज्ञान की प्राचीन परम्परा को आज यहाँ तक पहुँचाने वाले पुरातत्त्व और इतिहास के जितने भी साधन हैं, उनमें हस्तलिखित पोथियों का प्रमुख स्थान है। वेदों के गंभीर ज्ञान से लेकर पंचतंत्र की छोटी–छोटी कथाओं तक जितना भी संस्कृत का विशाल वाङ्मय हमारे सामने विद्यमान है, वह सहस्रों वर्षों से इन हस्तलिखित पोथियों के रूप में जीवित रहता हुआ, आज हम तक पहुँचा है। वास्तविकता है कि इन पोथियों का इतिहास ही ज्ञानजीवी भारत की आत्मकथा है। मानव ने जब अपने विचारों को वाणी दी, अपने भावों को प्रकट करने का प्रयास किया,उसी समय लेखन का भी उदय हुआ, लेकिन उस युग में लिखने के जो साधन थे,वे आज की अपेक्षा सर्वथा विचित्र थे। यह पोथियाँ श्रुति और कण्ठ में लिखी गई। अर्थात्वे एक की वाणी से दूसरे की श्रुति तक और दूसरे की वाणी से तीसरे की श्रुति स्मृति तक पहुँची। इस दृष्टि से सारा प्राचीन ज्ञान श्रुतजीवी एवं स्मृति संरक्षित था। गुरु–शिष्य और वंश परम्परा के क्रम से वह कण्ठस्थ रूप में सुरक्षित मौखिक ज्ञान ही श्रुति, स्मृति और पुराण आदि अनेक अभिधानों से कहा गया। ज्ञान विचारणा की इस परम्परा का अभ्युदय अरण्यों में अधिष्ठित ऋषि–मुनियों के पवित्र आश्रमों से हुआ।

बल, आयु के साथ–साथ ज्यों ज्यों मानव की मेधा–स्मृति में ह्रास होता गया,त्यों त्यों ज्ञान की विपुलपरम्परा को सुरक्षित रखने और उसको भावी पीढ़ियों तक पहुँचाने के प्राचीन माध्यमों में भी परिवर्तन हुआ।एक युग ऐसा था, जब ज्ञान को लिपिबद्ध करना धर्मानुगत नहीं समझा जाता था, किंतु 'गागर में सागर' की भाँति सूत्रग्रन्थों के सूक्ष्म ज्ञान ने एवं युग के अनुरूप परिवर्तित परिस्थितियों ने तत्कालीन विद्या–निकेतनों और अध्येताओं को ऐसी विकट स्थिति में ला पहुँचायाकि समग्रकण्ठाग्र ज्ञान को लिपिबद्ध करने के लिए उन्हें विवश होना पड़ा। तभी से सारा मौखिक ज्ञान, सारी मौखिक विद्याएं और सारे कण्ठाग्र शास्त्र पत्रों पर अर्थात् भोजपत्रों ताड़–पत्रों या ताम्रमृतिका पत्रों अथवा वृक्ष की छालों पर लिखे जाने लगे।

सर्वाधिक प्राचीन पोथियाँ भोजपत्रों और ताड़पत्रों पर लिखी हुई मिलती है। ताड़पत्र की पोथियाँस्योलमुखी कलम या लौह–लेखनी से लिखी जाती थी। भोजपत्र पर लिखी हुई पोथियाँ ताड़पत्र पर लिखी हुई पोथियों की अपेक्षा कम संख्या में उपलब्ध होती है। ताड़पत्र और भोजपत्रीय पोथियों को लिखने के लिए बड़ी सूझबूझ एवं साधना की आवश्यकता है। इन पोथियों के लेखक विद्वान् होने के साथ–साथ निपुण कलाकार भी थे।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

अति प्राचीनकाल में संरक्षित संगृहीत भारत की यह विपुल ग्रन्थ–संपदा धर्म द्रोहियों द्वारा अनेक बार विनष्ट किए जाने पर और बौद्धधर्म के प्रचार प्रसार से लेकर आंग्लशासन के अंतिम दिनों तक सहस्रों की संख्या में विदेशों को प्रवासित होने पर भी आज हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक भारत के सभी अंचलों में अपरिमित संख्या में बिखरी हुई है। यह जानकर विस्मय होता है कि आज ऐसी भी अनेक पोथियाँ चीन, जापान, जर्मनी और ब्रिटेन प्रभृति देशों में सुरक्षित मिलती है, संसार में ऐसा कोई बृहत पुस्तकालय नहीं जहाँ भारत के ये मूल्यवान् ग्रन्थरत्न सुरक्षित और अतिशय रूप में सम्मानित नहीं हो रहे हैं।

## वैदिक ज्ञान की विरासत

दस मंडलों में विभक्त ऋचा– समूहों का नाम दशतयी(ऋग्वेद) पड़ा और बाद में वे आठ अष्टको में विभक्त किए गए। इसी अष्टक–विभाग के माध्यम से शौनक महर्षि ने वैज्ञानिक ढंग से ऋग्वेद संहिता को पद–पाठों में छाँटकर अलग किया और आगे चलकर शाकल–वाष्कल प्रभृति शिष्य–सम्प्रदायों ने अपने–अपने ढंग से ऋग्वेद की शाखाओं का शोधकर अपनी–अपनी शाखाओं का निर्माण किया, जो कि 21 या 27 थी। इसी ढंग से दूसरे वेदों की संहिताओं की शाखाओं एवं संहिताओं का वर्गीकरण, व्यवस्थापन, सम्पादन एवं नामकरण हुआ।

वैदिक ज्ञान की बृहद् विरासत जो आज उपलब्ध है, वह वस्तुतः एक ऋषि, एक सम्प्रदाय, एक आश्रम अथवा एक मस्तिष्क या एक समय की देन न होकर अनेकऋषि समूहों, विभिन्न सम्प्रदायों, विभिन्न शाखाओं में विभिन्न आश्रमों, विभिन्न मस्तिष्कों और विभिन्न शताब्दियों की देन है। यह एक सामूहिक एवं सुदीर्घकाल में निर्मित विचारधारा है, जो समय, स्थान और व्यक्ति के अनुसार कभी तो शिथिल होती गई और कभी अपने चरमोत्कर्ष पर रही। अधिकांश ग्रंथ एक व्यक्ति के नहीं है। वे संहिता या संकलन है। उन पर पुनः–पुनः सम्पादन की अनेक मस्तिष्कों की और सामूहिक कार्य की स्पष्ट छाप है।[26]

अनेक ऋषि महर्षियों के हाथों एवं अनेक युगों से होकर आए हुए वैदिक ज्ञान की ही इस विरासत के सम्बंध से निरुक्तकार का कथन है कि ऐसे ऋषि हुए, जिन्होंने तपस्या के द्वारा वेदरूपी धर्म का साक्षात्कार किया। पुनः उन्हीं ऋषियों ने अपने बाद के ऋषियों को, जिन्हें उक्त धर्म का साक्षात्कार नहीं हुआ था अर्थात् जो वैदिक धर्म के स्वयमेव साक्षात्कर्ता नहीं थे, वेदमन्त्रों

26 जयचन्द्र विद्यालंकार – भारतीय इतिहास की रूपरेखा – पृ० 299

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

का उपदेश किया।[27]

इस परम्परागत शिष्य–प्रशिष्यसम्प्रदाय एवं आश्रम परम्परा द्वारा उपजीवित होकर आने वाले वेद मन्त्रों के संबंध में अलबेरुनी का कथन है कि पुराकाल में वेदमन्त्रों को पढ़ने का व्यवहार था। वेद गुरुमुख से सुनकर शिष्य–परम्परा द्वारा कण्ठस्थ होते हुए निर्वाहित होते आए हैं। इसी कारण वेदी–ज्ञानी जन कई बार वेद को भूल जाने से उसे खो चुके हैं।[28]

इस प्रकार अनेक ऋषि–वंशोंएवं प्राचीन विद्यानिकेतनों में वेद के सम्पूर्ण मन्त्रों की उनके विषय संगति के अनुसार छाँटकर अलग किया गया और उनकी चार संहिताओं का निर्माण कर तत्कालीन धर्म एवं ज्ञान के अधिष्ठाता ऋषि प्रमुखों ने उन पर अपने हस्ताक्षर की सही मुहर लगायी और वैदिक संहिताओं का वही सर्वसम्मत चतुर्धा स्वरूप आज विद्यमान है।

संस्कृति वह प्रक्रिया है, जिससे किसी देश के सर्वसाधारण का व्यक्तित्व निष्पन्न होता है। इस निष्पन्न व्यक्तित्व के द्वारा लोगों को इस चराचर जगत् के विषय में एक अलग दृष्टिकोण मिलता है। इस प्रकार वह संस्कृति के सत्पक्ष का समर्थन करते हुए उसे सर्वजन ग्राह्य बनाता है। कवि का यह व्यापार कवि–कर्म कविता या साहित्य है। साहित्य की सर्वप्रथम उपयोगिता है कि उससे पाठक को संस्कृति के सत्पक्ष का परिचय मिले और साथ ही उसका चित्त रस की स्रोतस्विनी में प्रवाहित होता रहे। इस प्रकार संस्कृति के विकास के साथ साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका का सतत् विन्यास होता है।

प्राचीन काल में कवि पदसे ब्रह्मविद् समझा जाता था।'कवयः क्रान्तदर्शिनः' वही प्राचीन दृ ष्टि है। ''कवि पुराणमनुशासितारम् इत्यादि वचनों में भी कवि शब्द से ज्ञानी ही माना जाता है।[29] सुदूर प्राचीन काल में कवियों को ऋषि की उपाधि दी गई थी। वैदिक धारणा के अनुसार कवि वह है, जो नित्य नूतन ज्ञान–विज्ञान का प्रत्यक्ष और दर्शयिता है।[30] ऋग्वेद की रचना मुख्यतः भरद्वाज, अत्रि, वसिष्ठ,वामदेव,कण्व आदि ज्ञान–विज्ञान और तपः से परिपूर्ण महात्माओं के द्वारा की गई। उसका व्यक्तित्व दिव्य था। उनकी प्रतिभा को ब्रह्म कहते थेऔर तत्कालीन धरणा के अनुसार

27 निरुक्त – 1.6.4 साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। ते अवरेभ्योऽसाक्षात्कृत धर्मेभ्य उपदेशेन मन्त्रान् संप्रादुः
28 अलबेरुनी का भारत, पृ० 8 अनु०।
29 भारतीय संस्कृति और साधना, पृ० 214
30 ऋ० – 1.164.18

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

देवता ही ब्रह्म प्रदान करते हैं। इस ब्रह्म की उत्पत्ति ऋत के सदन से हुई।[31]

वैदिक युग के साधारण कवियों में से कुछ राजा, सैनिक, वैश्य, स्त्रियाँ और आर्येतर लोग भी थे। इन कवियों ने अपनी व्यावसायिक अनुभूतियों का हृदयग्राही वर्णन सूक्तों में किया है। वैदिक कवियों के व्यक्तित्व का परिचय उन उदात्त विचारों से भी मिलता है, जो उनकी रचनाओं में पदे–पदे मिलते हैं–

वैदिक कवि समाज के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए कवीन्द्र रवीन्द्र ने कहा है[32]–

A people of vigorous and unsophisticated imagination awakened at the very dawn of civilisation to a sense of inexhaustible mystery that is implicit in life. It was a simple faith of theirs that attributed divinity to every element and force of nature but it was a brave and joyous one.

## ज्ञान की प्रतिष्ठा

ज्ञान अपनी आधिभौतिक उपयोगिता के बल पर तो विश्व में सदैव प्रतिष्ठित रहा है और रहेगा। प्राचीन भारत में इसके अतिरिक्त ज्ञान की प्रतिष्ठा के कुछ विशेष कारण थे। वैदिक धारणा के अनुसार ज्ञान के द्वारा मानव का व्यक्तित्व दिव्य हो जाता है। वह ज्ञान से संपन्न होने पर देवता बन जाता है।[33] ऐसे विद्वान् को समाज में सर्वोच्च आदर प्राप्त होता था।[34] मानव के जन्मजात तीन ऋणों में ऋषि ऋण से मुक्ति विद्या प्राप्त करने के द्वारा संभव मानी जाती थी।[35]

अथर्ववेद के अनुसार ज्ञान से चक्षु, प्राण और प्रजा पाने की विशेषता है–

**यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृत्तां पुरम्।**
**तस्मै ब्रह्म च ब्रह्माश्च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः।।**

(अथर्व० – 10.2.29)

---

31 ऋ० – 7.36.1
32 राम जी उपाध्याय, प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, पृ० 2
33 शत० ब्रा० – 3.7.3.10 – ''विद्वांसो हि देवाः''।
शत० ब्रा० – 2.2.2.6 – ''ये ब्राह्मणाः शुश्रुवांसोऽनूचानास्ते मनुष्येषु देवाः।
तै० सं० – 1.7.3.1 – ''एते देवा यत् प्रत्यक्षं ब्राह्मणाः''।
34 ऋ० – 1.164.16, अथर्व० – 11.5.26
35 तै० सं० – 6.3.10.5

**International Journal of Research in Social Sciences**
Vol. 9 Issue 6, June 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शतपथ ब्राह्मण में ज्ञान की प्रतिष्ठा को प्रमाणित करते हुए कहा गया है– स्वाध्याय और प्रवचन करने से मनुष्य का चित्त एकाग्र हो जाता है। वह स्वतन्त्र बन जाता है। नित्य उसे धन प्राप्त होता है। वह सुख से सोता है, अपना परम चिकित्सक है। उसे इन्द्रियों पर संयम होता है। उसकी प्रज्ञा बढ़ जाती है। उसे यश मिलता है। वह लोक को अभ्युदय की ओर लगा लेता है, उसे पूरा करता है। समाज अपनी आदर–भावना से, दान से और सुरक्षा से उसे संतुष्ट करता है। विविध विषयों का अध्ययन करने वाले लोग देवताओं को संतुष्ट करते हैं और प्रसन्न होकर देवता उनकी सभी कामनाएं पूरी कर देते हैं।[36]

36 शत० ब्रा० – 11.5.7.1–5